खवावत अंजन देत बनावत आड़ कँपो बिन हेत हो। या सुघराई भरोसे क्यों दौरि कै छोरि सखीन को काजर लेत हो ॥ १५४ ॥

परकिया स्वाधीनपतिका कवित्त।

कै वा मैं निहारै पिछवारे की गली में अली झांकि कै झरोखे नित करत सलामैं हैं। कै वा भेख भिच्छुक को ड्योटी बीच आप आय सबद सुनायो दुपहर जब्बलामें हैं॥ दास भनि कै वा भीतरेहूं ह्वै निरास गए पहिरि सुनारिन के बसन ललामें हैं। हाय हौं गँवारिन न घात मिलबे को लहौं मेरे हित कान्ह केती करत कलामै हैं ॥ १५५ ॥

रूपगर्विता यथा सवैया।

चंद सो आनन मेरो बिचारा तौ चंदही देखि सिराओ हियो जू। बिम्ब सो जो अधरान बखानो तो बिम्बहि को रस पीओ जिओ जू॥ श्रीफलही क्यों न अंक भरो जो पै श्रीफल मेरे उरोज कियो जू। दीपति मेरी दिये सो है दास तो जाऊँ हौं बैठि निहारो दियो जू ॥ १५६ ॥

प्रेमगर्विता सवैया।

न्हान-समै जब मेरो लखै तब साज लै बैठत आनि अगाऊँ। नायक ही जू न रावरो लायक यों कहि हौं कितनो समुझाऊं॥ दास कहा कहौं पै निज हाथही देत न हौंहूं सवारन पाऊं। मोहि तौ साध महा उरमें जो महाउर नाइन तोसों दिआऊं॥ १५७॥

गुनगर्विता कबित्त।

औरन अनैसो लगै हौं तो ऐसी चाहती जो बालम कै मोसी तिय ब्याहि कोऊ आवती। क्यों हूं कछू कारज उठाय लेती मेरो घरी पहर को अली तौ हौं खाली होन पावती॥ दास मनभावन के मन के रिझावन को चारु चारु चित्रित कै चित्र दरसावती। प्रेमरस धुनि को कवित्तें करि ल्यावती कै बीनै लै बजावती कै गीतें कछु गावती॥ १५८॥

बासकसज्जा लच्छन दोहा।

आवन्तो जहँ कन्त को निजगृह जानै दार।
बासकसज्जा तिहि कहत साजै सेज सिँगार॥

स्वकीया वासकसज्जा यथा कवित्त ।

जानि जानि आवै प्यारो प्रीतम बिहार-
भूमि मानि मानि मंगलसिंगारन सिँगारती ।
दास दृग कंजन बँदनवार तानि तानि छानि
छानि फूलै फूलै सेजहिँ सँवारती ॥ ध्यानही में
आनि आनि पीको गहि पानि पानि ऐंचि पट
तानि तानि मैनमद झारती । प्रेम गुन गानि
गानि पीउ बनि सानि सानि बानि बानि खा-
नि खानि बैनन बिचारती ॥ १६० ॥

परकीया वासकसज्जा सवैया ।

भावतो आवतो जानि नवेली चमेली की
कुंज जो बैठती जाय कै । दास प्रसूनन सोन-
जुही करै कंचन सी तनजोति मिलाय कै ॥
चौंकि मनोरथही हँसि लेन चलै पग लाल प्रभा
महि छाय कै । बीर करै कर बीर झरैनि बलै
हरषै छबि आपनी पाय कै ॥ १६१ ॥

आगतपतिका वासकसज्जा दोहा ।

पियआगम परदेस तें आगतपतिका भाउ ।
है वासकसज्जाहि मै वहै बढ़ै चित चाउ ॥

यथा सवैया ।

भावती आवत ही सुनि कै उड़ि ऐसी गई
हद छामता जी गुनी । कंचुकी हू में नहीं म-
ढ़ती बढ़ती कुच की अब तो भई दौ गुनी ॥
दास भई चिकुरारन में चटकीलता चामर चारु
तें चौगुनी । नौगुनी नीरज तें मृदुता सुखमा
मुख में ससि तें भई सौगुनी ॥ ६३ ॥

अभिसारिका लच्छन दोहा ।

मिलनसाज सब करि मिलै अभिसारिका सुभाय।
पियहिँ बोलावै आपुकै आपुहि पिय पै जाय ॥

स्वकीया अभिसारिका कबित ।

रीझि जग मगे दृग मेरे या सिँगार पर ल-
लित लिलार पर चारु चिकुरारी पर । अमल
कपोल पर कमल बदन पर तरल तरौनन की
रुचिर रवारी पर ॥ दास पग पग दूनो देहदुति
दग दग जग जग ह्वै रही कपूर धूर सारी पर।
जैसी छबि मेरे चित चढ़ि आई प्यारी आज
तैसिये तू चढ़ि आई बनि कै अटारी पर॥१६५॥

परकीया अभिसारिका सवैया ।

लच्छन धौल अटा लखि नील दियो छिटकाय छटा छबिजालहि । तापर पूरो सुगन्ध अतूल को दै गई मालिन फूल की मालहि ॥ छोड़ि दियो मोहि लोगनि भौन दई दिये दास महा सुख-कालहि । आली दरीची की नीची उदीची की बीची निमीचि है ल्याउरी लालहि ॥

शुक्लाभिसारिका कवित्त ।

सिखनख फूलन के भूषन बिभूषित कै बांधि लीनो बलया बिगत कीनी बजनी । तापर संवाख्यो सेत अंबर को डंबर सिधारी स्याम सन्निधि निहारी कहूं न जनी ॥ छीर के तरंग की प्रभा को गहि लीन्हो तिय कीन्हो छीर सिन्धु छिति कातिक की रजनी । आनन प्रभा तें तन छांहहू छपाए जाति भौंरन के भीर संग लाये जाति सजनी ॥ १६७ ॥

कृष्णाभिसारिका यथा ।

जलधर ढारैं जलधारन को अंधिकारी निपट अँधारी भारी भादव की जामिनी । तामे स्याम-

बसन बिभूखन पहिर स्यामा स्याम पै सिधारी
प्यारी मत्त गजगामिनी ॥ दास पौन लागे उ-
परैनी उड़ि उड़ि जाति तापर न क्योंहू भांति
जानी जाति भामिनी । चारु चटकीली छबि
चमकि चमकि उठै लोग कहैं दमकि दमकि
उठै दामिनी ॥ १६८ ॥

इति संयोग ।

अथ बिरह हे तुलच्छन दोहा ।

बिरह हेत उत्कंठिता बहुरि खंडिता मानि ।
कहि कलहंतरितानि पुनि गने बिप्रलब्धानि ॥
पांचो प्रोषितभर्टका सुनो सकल कबिराय ।
तिनके लच्छन लच्छ अब आछो कहौं बनाय ॥

उत्कंठिता लच्छन दोहा ।

प्रेमभरी उत्कण्ठिता जो है प्रीतमपंथ ।
बेर लगी त्यों त्यों बढ़ै मनसूबन के ग्रन्थ॥१७१॥

यथा सवैया ।

जौ कहो काहू के रूप सों रीझै तौ और
को रूप रिझावनवारी? । जौ कहो काहू के प्रेम

पगी हैं तो और की प्रेम पगावनवारी? ॥ दास जू दूसरी बात न और दूती बड़ी बेर-बितावनवारी। जानति हौं गई भूलि गोपाल गली यहि ओर की आवनवारी ॥ १७२ ॥

पुनः सवैया।

तनिकौ तिनकै खरकै खरकौ तिनकै तनकौ ठहरैबो करै। लखि बोलत मोर तमाल कै डोलत चाय सो चौंकि चितैबो करै॥ यह जानती प्रीतम आंवहिंगे अधरात लौं ज्यों नित ऐबो करै। अँखियाँन कौं दास कहा कहिये बिन कारनही अकुलैबो करैं॥ १७३ ॥

पुनः सवैया।

आज अबार बड़ी करी बालम जी अब कै सखि भेटन पैहौं। कै मनकाम सपूरन तूरन तौ यह बात प्रमान करैहौं॥ आतुर ऐबो करौ जू न तौ मग जोहत होतौ दुखी बहुतै हौं। आपनी ठौर सहेट बदौ तहँ हौंही भले नित भेटकै ऐहौं ॥ १७४ ॥

खंडिता लक्षन दोहा।

प्रीतम रैनि बिहाय कहुँ जापै आवै प्रात ।
सुहै खंडिता मान में कहै करै कछु बात ॥

यथा कवित्त।

लोचन सुरंग भाल जावक को रंग मन सुखमा उमंग अरुनोदै अवदात की । भावती को अंगराग लाग्यो है सभाग तन छबि सी छपन लागी महातम गात की ॥ दास बिधुरेख सो नखच्छत सुबेख ओठ अंजन की रेख अलिनी सी कंजपात की। प्यारे मोहि दीन्हों आनि दरस प्रभात प्रभा तनमैं लै दरस पीछे कै प्रभात की ॥ १७६ ॥

धीरा यथा।

अंजन अधर भुव चंदन सुबेंदी बाहु सुखमा सिँगार हास करुना अकस की। नख है न अंग राग कुंकुम न लाग्यो तन रौद्र बीर भयवारी झलक रहस की ॥ पलन की पीक पर बसन हरा अलीक दास छबि घन अदभुत संत अस

को। पहिले भुलानी अब जानी मैं रसिकराय रावरे के अंगनि निसानी नवरस की ॥१७७॥

अधीरा यथा।

ज्वाल उपजावन अज्वाल दरसावन सुभाल यह पावक न जावक दिढ़ाये हौ। देखि नख-सिख उठी बिष की लहरि महा कहा जो अधर बीच अंजन सो लाये हौ॥ दास नहिं पीक-लीक व्यालिनि बिसाली ठीक उर मे नखच्छत न खंजर छपाये हौ। मेरे मारिवे को वा बिसा-सिनि पठाई हरि छल को बनाय लिये कितनी उपाये हौ॥ १७८॥

धीराधीरा यथ सवैया।

भाल को जावक ओठ को अंजन पोंछि के होते गलीपथगामी। ठोढ़ी की गाढ़ नखच्छत मूंदो न दास जू होती यों बेसुधि कामी॥ कंस कुठाकुर नंद अहीर परोसिनि देत डरै बदनामी। यातें कछू डर लागै न तौ हमै रावरेही सुख सों सुख स्वामी॥ १७९॥

प्रौढ़ा धीरादि भेद लक्षन दोहा ।

तिय जु प्रौढ़ अतिप्रेम मैं सो न सकै कहिबात ।
ता रिस ताकी क्रियन तें जानें मति अवदात ॥

यथा सवैया ।

होरी की रैनि बिहाय कहूं उठि भोरहीं भावती आवत जोयो । नेकु न बाल जनाई भई जऊ कोप को बीज गयो हिय बोयो ॥ दास जू दै दै गुलाल की मारनि अंकुरिबो उहि बीज को खोयो । भावते भाल को जावक ओठ को अंजनहो को नखच्छत गोयो ॥ १८१ ॥

तिलक ।

प्रौढ़ा धीरादि के तीनों भेद याही में हैं ।

मानिनी लक्षन दोहा ।

पियपराध लखि मान को किये मानिनी नाम ।
लघु मध्यम गुरु मान को उदै होत जा काम ॥

लघुमान यथा सवैया ।

है यह तौ घर आपनोई उत तौ करि आओ मिलाप की घातें । यों दुचिताई में प्रेम सनै न बनैगी कछू रस रीति सुहातें ॥ दासजी

मोहि लगी पवलों अब लौटि गई मु हौं जानती जातें । नाहकही को कही अंखिया नहीं नाहकही हमसों करौ वातें ॥ १८३ ॥

मध्यम मान सवैया ।

तब औरकी ओर निहारिवे को करी निसहि मेरी दोहाइये जू । सुलख्यो हम आपने नैनन सों कहा कीबो करो चतुराइये जू ॥ बतलात ही लाल जिते तितही अब जाइ मुखे बतलाइये जू । इत जोरो जो रावरी सो न जुरै न जरै पर लोन लगाइये जू ॥ १८४ ॥

गुरुमान यथा सवैया ।

लाल ए लोचन काहे प्रिया हैं दियो है है मोहन रंग मजीठी । मोतै उठो है जो बैठे परीन की सीठो क्यों बोलो मिठाइ लौं मीठो ॥ चूक कहो किमि चूकत हो जिन्हें लागी रहै उपदेस बसीठो । झूठी सबै तुम सांचे लला यह झूठी तुमारेहु पाग की चीठी ॥ १८५ ॥

इति खंडिता ।

अथ कलहंतरिता दोहा।

कलहन्तरिता मान कै चूक मानि पछताय।
सहज मनावन की जतन मान सांति ह्वै जाय॥

यथा सवैया।

जीवौं तौ देखती पाय परौं अब सौतिहू के महलै किन होई। आज तें मान को नाम न लेउ करौं टहलै सहलै अति जोई॥ दास जू दै न सकी बिखदै सिखमान कौ बैरिन प्रान लियोई। एरी सखी कहूं क्यौं हू लखी पिय सौं करि मान जियै तिय कोई॥ १८७॥

लघुमान सांति सवैया।

जानि कै आपै निहारत मेरे गई फिरि बाँकी कमानसी भौंहैं॥ दास जू डारि गले भुज बाल के लाल करी चतुराई अगौहैं। प्रानप्रिया लखि तौ वा गँवारि कि सामुहें व्योम उड़े खग को हैं॥ बोली हँसौहै जु दीजिये जान किये रहिये मुख मो मुख सौंहैं॥ १८८॥

मध्यम मान सांति सवैया।

बातें करी उनसों घरी चारि लौं सो निज

नैननि देखतही हौं। कीजे कहा जो बनावरी बांधि कै दास कियो गुरु लोगन को सौं॥ बैठा जू बैठो न सोच करो हिय मेरे ता रोम की जात भई द्यौं। जान्यो मैं मान छोड़ाइवे को तुमै आवतो लाल बड़ोयै बड़ी गौं॥ १८६॥

गुरुमान शांति सवैया।

जान्यो मैं वा तिल तेल नहीं पहिले जब भामिनी भौंह चढ़ाई। कान्ह जू आज करामत कीन्ही कहां लौं सराहौं महा सुघराई॥ दास बसो सदा गोपन मैं यह अद्भुत बैदई कौने सि-खाई। पाय लिलार लगाय लला तिय नैनन की लिया ऐंचि ललाई॥ १६०॥

साधारन मान शांति सवैया।

आज तें नेह को नातो गयो तुम नेम गहो हौंहूं नेम गहौंगी। दासजू भूलि न चाहिय मोहि तुमै अब क्यौंहूं न हौंहूं चहौंगी॥ वा दिन मेरे प्रजंक पै सोये हो हौं वह दाव नहीं पै लहौंगी। मानो बुरो कि भलो मनमोहन सेज तिहारी मैं सोइ रहौंगी॥ १६१॥

विप्रलब्धा लक्षण दोहा ।

मिलन-आस दै पति छली औरहि रत ह्वै जाइ।
बिप्रलब्ध सो दुःखिता परसंभोग सुभाइ ॥१६२॥

यथा कवित्त ।

जानि कै सहेट गई कुंजन मिलन तुमैं जान्यो ना सहेट के बटैया ब्रजराज से । सूनो लखि सदन सिँगार ज्यों अँगार भए सुखदैन वारे भए दुखद समाज से ॥ दास सुखकंद मंद सीतल पवन भए तनते सुज्वाल उपजावन इलाज से । बाल के बिलापन बियोग तन तापन सो लाज भई मुकुत मुकुत भए लाज से ॥

अन्यसंभोगदुःखिता यथा सवैया ।

ढीली परोसिनि बेनी निहारि कै जानि गई यह नायक गूंदी । औरै बिचार बढ़ो बहुरयो लखि आपनी भांति की नीवी की फूंदी ॥ दास-पनो अपनो पहिचानत जानो सबै जु हुती कछु मूंदी । ऊभि उसास गही तरुनो बरुनीन मैं छाय रही जल बूंदी ॥ १६४ ॥

पुनः सवैया।

केलि की भौन में सोवत रौन बिलोकि ज-
गायबे को भुज काढ़ी॥ सैन में पेखि चुरीन की
चूरन तूरन तेह गई गहि गाढ़ी। दास महाउर
छाप निहारि महा उर ताप मनोज को बाढ़ी॥
रोसभरी अँखिया नित घूरति मूरति ऐसी बि-
सूरति ठाढ़ी॥ १९५॥

पुनः कवित्त।

ल्याई बाटिकाही सों सिँगार हार जानती
हौं कंटन को लाग्यो है उरोजन में घाव री।
दौरि दौरि टहल कै महल ह्वै कै बादिही बि-
गाऱ्यो उर चंदन दृगंजन बनाव री॥ मेरो कहा
दोस दास बात जौन बूझि लीनी अपनीही सू-
झि तू तौ भरि आई भाव री। पीतपटवारे को
बोलावन पठाई मैं तो पीत पट काहे को रँगाइ
ल्याई बावरी॥ १९६॥

प्रोषितभर्तृका दोहा।

कहिये प्रोषित भर्तृका पति परदेसी जानि।
चलत रहत आवत मिलत चारिभेद उनमानि॥

प्रथम प्रवत्स्यतप्रेयसी प्रोषितपतिका फेरि ।
आगच्छतपतिका बहुरि आगतपतिका हेरि ॥

प्रवत्स्यतप्रेयसी सवैया ।

बात चली यह है जब तें तबतें चले काम के तीर हजारन । भूख औ प्यास चले मन तें अँसुआ चले नैनन तें सजि वारन ॥ दास चलीं करतें बलया रसना चली लंक तें लाग्यो अवारन । प्रान के नाथ चले अनतै तनतें नहि प्रान चले किहि कारन ॥ १९९ ॥

प्रोषितपतिका ।

सांझ के ऐबे की औधि दै आये बितावन चाहत याहू बिहानहिं । कान्ह जू कैसे दया के निधान हौ जानो न काहु के प्रेम प्रमानहि ॥ दास बड़ोई बिछोह कै मानतो जात समीप के घाट नहानहिं । कास के बीच कियो तुम डेरो तौ को सकै राखि पियारी के प्रानहि ॥२००॥

आगच्छतपतिका ।

बाम दई कियो बाम भुजा अँखिया फरकै

को प्रमान टगे सो। झूठो सँदेसिया भी सगु-
नौती कहैयन को परयो एक परोसो ॥ दास
जू प्रीतम की पतिया पतियात जो है पतियाइ
भरो सो। भागभरो सोई छोड़ि दियो हम का
गहिये अब काग भरोसो ॥ २०१ ॥

आगतपतिका।

देखि परै सब गात कटीले न ऐसे में ऐसी
प्रिया सकै कोइ कै। आदर हेत उठै प्रति रोम
है दास यो दीनदयालता जोइ कै ॥ कन्त बि-
देसी मिले सुख चाहिये प्रानप्रिया तू मिलै
किमि रोइ कै। जीवननाथ सरूप लख्यो पै
हमै मलिनी निज आंखिन धोइ कै ॥ २०२ ॥

उत्तमादि भेद दोहा।

जितनी तिय बरनी ति सब तीनभांति की जानि।
तिन्हैं उत्तमा मध्यमा अधमा नाम बखानि ॥
उत्तम मान बिहीन है लघु मध्यम मधिमान।
बिनऽपराधही करत है अधम नारि गुरुमान ॥

उत्तमा यथा सवैया।

बावरी भागनि तें पति आवत जो मति मोहै अनेक तिया को। भोर को आवनि कुंज बिहारी को मेरो तौ दासजू ज्यारी जिया को। आजु तें मो सिख ले तू अली है गली तजि सौखनि छीछी क्रिया को। प्रानपियारे तें मान करै तो कसाइनि क्रूर कठोर हिया को॥२०५॥

मध्यमा यथा सवैया।

सारी निसा कठिनाई धरे रहै पाहन सो मन जात बिचारो। दास जू देखते धाम गोपाल को पाला सो होत घरी धुरि न्यारो॥ नेह की बातें कहौ तुम एतो पै मो मन होत न नेकहू न्यारो। पूस को भानहू वाइ कृसान सो मूढ़ अज्ञान सो मान तिहारो॥ २०६॥

अधमा यथा कबित्त।

माधो अपराधो तिल आधो ना बिचारो शुद्ध साधही ते राधे हठ आराधन ठानती। दास यों अली के बैन ठोकै करि मानो ज्ञान ह्वैहै दुख

जी के यह नीके हम जानती ॥ वाकी सिख पाई वहै ध्यान धन ठहराई और की सिखाई कछू कानन न आनती । मान करि मानिनी मनाए मानै बावरी न कोऊ गुरु मानै सतगुरु मान मानती ॥ २०७ ॥

इति आलम्बन विभाव ।

अथ उद्दीपन विभाव सखीजन वर्णन दोहा ।

तिय पिय की हितकारिनी सखी कहं कविराव।
उत्तम अरु मध्यम अधम प्रगट दूतिका भाव ।

साधारन सखी यथा कवित्त ।

छबि ना बरनि जिन सुरति बढ़ाई नई लगनि उपाय घात घातन मिलाई है । मान में मनायो पीर बिरह बुझायो पद देस में बसीठो करि चीठो पहुंचाई है ॥ दास जू संजोग में सुबैनन सुनाय मैन प्रीति न बढ़ाय रस रीति न बढ़ाई है। चन्द्रावलि राधा जू की ललिता गोपाल जू की सखियां सोहाई कैंधो भाग की भलाई है ॥ २०९ ॥

नायिका हित सखी।

तेरी खीझिबे की रुख रीझ मनमोहन की बातें वहै साज साजि साजि नित आवती। आपुही तें कुंकुम की छाप नखछत गात अंजन अधर भाल जावक लगावती॥ ज्यों ज्यों तू अयानी अनखानी दरसावै त्यों त्यों स्याम कृत आपनी लहे को सुख पावती। तिनही खिसावै दास जौ तू यों सुनावै तुम योंही मनभावती हमारे मन भावती॥ २१०॥

नायक हित सखी।

केसरि के केसर को उर मैं नखच्छत कै कर लै कपोलनि मैं पीक लपटाई है। हारावली तोरि छोरि कंचनि बिथोरि खोरि मोहू गति भोरि इत भोरे उठि आई है॥ पी को बिन प्रेम कोज दास इहि नेम परपंच करि पंच मैं सोहागिनि कहाई है। हांतो करि हा ती मोहि ऐसी ना सोहाती भेष कन्त है तकत यह कैसी चतुराई है॥ २११॥

उत्तमा दूती यथा सवैया।

मोहि सो भूल भई सिगरी बिगरी सब आजु सँवार करौंगी। बीर की सौं बलबीर बलाय ल्यौं आज सुखी इकबार करौंगी॥ दास निसा लौं निसा करिये दिन बूड़ते ब्यौंत हजार करौंगी। आज बिहारी तिहारी पियारी तिहारे मैं हीय को हार करौंगी॥ २१२॥

मध्यम दूती यथा कवित्त।

प्यारी कोमलांगी औ कुमुदबंधुबदनी सुगंधन की खानि को क्यों सकत सताय हौ। बेनी लखि मोर दौरे मुख को चकोर दास स्वासनि को भौंर किन किन को बरायहौं॥ वह तो तिहारे हित अबही पधारे पै धौं तुमही बिचारो कैसे धीरज धराय हौं॥ ह्वै है काम पालकी बरसगांठि वाही मिस अब मैं गोपाल की सौं पालकी मैं ल्यायहौं॥ २१३॥

अधम दूती यथा सवैया।

खिल कंचन सी वह अंग कहा कहूँ रंग

कदंबन के तुम बारो। वाईं वांग्र कली विकसो वह होइ कहा तुम सोइ रहो गहि डारो॥ नित दास ह्वा ल्यावही ल्याव कहो कछु आपनो वाको न भेद बिचारो। वह कौल सो गोरी किसोरी कहाँ औ कहाँ गिरधारन पानि तिहारो॥ २१४॥

सखीकर्म दोहा।

मण्डन सन्दरसन हँसी संघट्टन सुभ धर्म।
मानप्रवर्जन पत्रिकादान सखिन के कर्म॥२१५॥
उपालम्भ सिच्छा स्तुती विनय यहच्छा उक्ति।
बिरहनिवेदनजुत सुकवि बरनत हैं बहु जुक्ति॥
इन बातनि पिय तिय करै जहाँ सुधीसर पाइ।
वहै स्वयंदूतत्व है सा हौं कहौं बनाय॥२१७॥

मण्डन यथा—सवैया।

प्रीतमपाग सँवारी सखी सुघराई अनाखो प्रिया अपनी है। प्यारीकपोल को चित्र बनावत प्यारे बिचित्रता चारु सनी है॥ दास दुहूं को दुहूं को सवाँरिबो देखि लखी सुख लूटि

बनी है। वै कहैं भावती कैसो बनो वै कहैं मन-भावती कैसी बनी है ॥ २१८ ॥

अन्तरघन यथा।

आहट पाय गोपाल को बाल सनेह के गाँ-सनि सो गँसि जाती। दौरि दरीची के सामुहैं ह्वै दृग जोरि सो भौंहन में हँसि जाती ॥ दास न जानत कोऊ कहूं तन में मन में छवि में बसि जाती। प्यारे की तारे कसौटिन में अपनी छवि कञ्चन सी कसि जाती ॥ २१९ ॥

काहे को दास महेस महेस्वरि पूजनकाज प्रसूनन तूरति। काहे को प्रात नहानन के बहु दानन दै व्रत संजम पूरति ॥ देखरी देख भँगोटि कै नैनन कोटि मनोज मनोहर मूरति। येई हैं लाल गोपाल अली जिहि लागि रहै दिन रैन बिसूरति ॥ २२० ॥

परिहास।

मोहन आपनो राधिका को बिपरीति को चित्र विचित्र बनाय कै। दीठि बचाय सलोनी

की आरसी में चपकाय गयो बहराय कै॥ घूमि घरीक में आय कह्यो कहा बैठी कपोलन चन्दन लाय कै। दर्पन त्यों तिय चाह्यो तहीं सिर नाय रही मुसकाय लजाय कै ॥ २२१ ॥

संघट्टन यथा ।

लेहु जू ल्याई सुगेह तिहारे परे जिहि नेह सँदेह खरे मैं। भेटो भुजा भरि मेटो व्यथा निसि मेटो जु तौ सब साध भरे मैं॥ सम्भु ज्यों आधिही अङ्ग लगावो बसायो कि श्रीपति ज्यों हियरे मैं। दास भरी रस केलि सकेलीये आनँदबेलि सी मेलि गरे मैं ॥ २२२ ॥

आपने आपने गेह के द्वार तें देखा देखी कै रहे हिलि दोऊ। त्योंही अँध्यारो कियो झपि मेघनि मैन के बान गए खिलि दोऊ ॥ दास चितै चहुंघा चितचाय सो औसर पाय चले पिलि दोऊ। प्रेम उमंडि रहे रसमंडित अंतर की मड़ई मिलि दोऊ ॥ २२३ ॥

मानप्रबर्जन यथा—कबित्त।

पंकज चरन की सौं जानु सुबरन की सौं

लंक तनु की सौं जाको अलख महति है । त्रि-
बली तरंग कुच सम्भु जुग संग की सौं हारावलि गंग की सौं जो उत बहति है ॥ श्रुति संनुधारी वा बदन द्विजराज की सौं एरी प्रानप्यारी कोप कापे तू गहति है । साँची हौं कहति तुव बेनी सौं कमलनैनी तेरी सुधिसुधा मोहिँ ज्यावति रहति है ॥ २२४ ॥

पत्रिकादान यथा सवैया ।

कैसो री कागद ल्याई नई ? पतिया है दई वृषभानकुमारी । भीगी सु क्यों ? अँसुवान की धारे जरी कहि कैसे? उसासन जारी ॥ आखिर दास देखाई न देत ? अचेत हुती बहुतै गिरधारी। एती तौ औंच में ज्वाल रही जब छाती धरे रहे पाती तिहारी ॥ २२५ ॥

उपालम्भ यथा—कवित्त ।

मुख द्विजराज अधिकारी मखतूल अलकानि को है तासों बिन काज दुख लहिये । नैन श्रुतिसेवी सर ह्वै के उर लागत है नाक

मुकुतन संग ताकी दाह दहिये ॥ दास मन-भावती न भावती चलन तेरी अधर अमी को अवलोकि मोहि रहिये। है के सम्भुरूपी हे उरज ये कठोर ये कठोरताई एती करें कासो जाइ कहिये ॥ २२६ ॥

शिक्षा यथा—सवैया।

वाही घरी तें न ज्ञान रहै न रहै सखि-यान की सीख सिखाई। दास न लाज को साज रहै न रहै सजनी गृहकाज की घाई ॥ ह्यां सिख साध निवारे रहो तबहीं लों भटू सब भाँति भलाई। देखत कान्है न चेत रहै री न चित्त रहै न रहै चतुराई ॥ २२७ ॥

स्तुति यथा—कवित्त।

राधे तो बदन सम होतो हिमकर तौ अ-मर प्रति आसन बिगारते क्यों रहते?। क्योंहूं कर पद सरि पावते जो इन्दीवर सर में गड़े तो दिन टारते क्यों रहते? ॥ दास दुति दसन की देख्यो दई दारिमै तो पचि पचि उदर बिदारते

क्यों रहते ?। एरी तेरे कुचसरि होत करिकुम्भ तो वे उन पर लै लै छार डारती क्यों रहते ? ॥

बिनय यथा—सवैया।

आन भए गृहलोग कहूं न परोसह्न को कछु आहट पैये। दीनदयाल दया करि कै बहु द्योसनि को तनताप बुझैये ॥ दास ये चन्दन चाँदनी चौसर औसर बीते न औसर पैये। गोहन छाड़ि कछू मिसकै मनमोहन आज यहां रहि जैये ॥ २२९ ॥

उद्दचा।

सुनि चन्दमुखी रहि रैनि लख्यो मै अनन्द-समूहमन्यो सपनो। दृगमीचनि खेलत तो सँग दास दयो बिधि फेरि सु बालपनो ॥ लगी ढूढ़न चम्पलता लतिका चलि ता छन मोहिँ बन्यो छपनो। जनु पावै नही ते छिपाय रही तू ओढ़ाय कै अंचलही अपनो ॥ २३० ॥

कवित्त।

गति नरनारिन की पच्छी देहधारिन की

इन की मझारिन को एकै बार बंधई । दीनी बिकलाई सुधि बुधि बिसराई ऐसी निरहै कसाई तोसो करि न सकै दई ॥ बिधि के सँवारे कान्ह कारे औ कपटवारे दास जू न इनकी अनीति आज की नई । सुर की प्रकासिनि अधर-सेजवासिनि सु बंस की ह्वै बंसी तू कुपंथिन कहा भई ॥ २३१ ॥

बिरहनिवेदन यथा – सवैया ।

दास जू आलस लालसा त्रास उसासन पास तजै दिन रातै । चिन्ता कठोरता दीनता मोह उदीनता संग कियो करै बातै ॥ आधि उपाधि असाधिता व्याधि न राधिके कैसहू ह्वै सकै हातै । तेरे मिलाप बिना ब्रजनाथ इन्हैं अपनाये रहै तिय नातै ॥ २३२ ॥

उद्दीपन विभाव यथा – कबित्त ।

बाग के बगर अनुरागरली देखतिही सुखमा सलोनी सुमनावलि अछेह की। हार लगि जाती फेरि ईठि ठहराती बोलै औरनि रिसाती

भाती आसव अदेह की ॥ दास अब नीके जभि भरति उसासु री सु बाँसुरी की धुनि प्रति पाँसुरी में बेह की । बाँसी गाँसी नेह की बिसारी भरमेह की रही न सुधि गेह की न देह की न नेह की ॥ २३३ ॥

अनुभाव लक्षण दोहा ।

सु अनुभाव जिहि पाइये मन को प्रेम प्रभाव ।
याही में बरनै सुकबि आठो सात्विक भाव ॥

यथा सवैया ।

की बँधिही बँधि जात है ज्यों ज्यों सुनीवी तनीन को बाँधति छोरति । दास कटीले ह्वै गात कँपै बिहँसौंही हँसौंहीं लसै दृग लोंरति ॥ भौंह मरोरति नाक सकोरति चीर निचोरति चौ चित चोरति । प्यारो गुलाब के नीर में बोर्यो प्रिया लपटे रस भीर में बोरति ॥२३५॥

सात्विक भाव—दोहा ।

स्तम्भ स्वेद रोमांच स्वरभङ्ग कम्प वैवर्ण ।
अश्रु प्रलाये सात्विकी भाव के उदाहर्ण ॥

यथा कवित्त ।

कहि कहि प्यारी अबै चढ़ती अटारिन पै काहि अवलोक्यो यह कैसो भयो ढंग है? । औरे ओर तकति चकति उचकति हास खरी सखि पास पै न जानै कोउ संग है ॥ थकि रही दीठि पग परत धरनि नीठिं रोमनि उमग भो बदलि गयो रङ्ग है। नैन छलकौहैं बर बैन बलकौहैं औ कपोल फलकौहैं भलकौहैं भये अङ्ग हैं ॥२३७॥

विभिचारी भेद ।

निर्बेद ग्लानि शंका असूया औ मदश्रम आलस दीनता चिन्ता मोह स्मृति धृति जानि । व्रीड़ा चपलता हर्ष आवेग जड़ता बिखाद उतकण्ठा निद्रा गर्व अपस्मार मानि ॥ स्वपन विबोध अमरख अवहित्था गनि उग्रता औ मति व्याधि उन्माद मरम आनि । त्रास औ बितर्क व्यभिचारी भाव तैंतिस ये सिगरे रसनि के सहायक से पहिचानि ॥ २३८ ॥

यथा कवित्त ।

सुमिरि सकुचि न थिराति सकि अकति

तरति उग्र बानि सगिलानि हरखाति है। उनीदति अलसाति सोवत मधीर चौंकि चाहि चित अमित सगर्व अनखाति है॥ दास पिय नेह छिन छिन भाव बदलति स्यामा सबिराग दीन मति कै मखाति है। जल्पति जकाति कहरत कठिनाति माति मोहति मरति बिललाति बिलखाति है॥ २३९॥

थाई भाव लक्षन दोहा।

थाई भाव सिँगार को प्रीति कहावै मित्त।
तिहि बिन होत न एकऊ रससिंगार कबित्त॥
थाई भाव बिभाव अनुभाव सँचारी भाव।
पैये एक कबित्त मैं सो पूरन रसराव॥ २४१॥

यथा कबित्त।

आज चन्द्रभागा चंपलतिका बिसाखा को पठाई हरि बाग तें कलामैं करि कोटि कोटि। सांझ समैं बीथिन मैं ठानी दृगमीचनी भोराई तिन राधे को जुगुति कै निखोटि खोटि॥ ललिता के लोचन मिंचाय चन्द्रभागा सो दुरायबे

को ल्याई वै तहांई दास पोटि पोटि। जानि जानि धरी तिय बानी रसभरी सब आली तिहि घरी हँसि हँसि परीं लोटि लोटि ॥२४२॥

शृंगार हेत लक्षण दोहा।

कहत सँजोग बियोग द्वै हेत सिँगारहि लोग।
संगम सुखद सँजोग है बिछुरे दुखद बियोग॥

संयोग शृंगार यथा कवित्त।

जानु जानु बाहु बाहु मुख मुख भाल भाल सामुहैं भिरत भट मानो थरु थरु है। गाढ़े ठाढ़े उरज ढलैत नख घाय लेत ढाहै ढिग करन संजोगी बीर बरु है॥ टूटै नग छूटै बान सिंजित बिरद बोलै मसर न मारु बाजै बाजत प्रबरु है। राधे हरि क्रीड़त अनेकनि समरकला मानौ मढ़ी सोभा औ सिँगार सो समरु है॥ २४४॥

सुरतान्त यथा कवित्त।

उठी परजंक तें मयंकबदनी को लखि अंक भरिबे को फेरि लाल मन ललकैं। दास अंगिराति जमुहाति तकि झुकि जाति दीने पट अं

तार भतन भोप भलकैं ॥ तैसे भंग भंगन खुली हैं सेदकनन खुली भलकन खरी खरी छबि छलकैं । अधखुली भाँगी हद भधखुली नखरेख भधखुली हांसी तैसी भधखुली पलकैं ॥ २४५ ॥

हाव भेद दोहा ।

अलंकार बनितान के पाय सँजोग सिँगार ।
होत हाव दस भांति को ताको सुनो प्रकार ॥
लीलाललितबिलासकिलकिंचितबिहितबिछित्त।
मोट्टाइत कुट्टमिति बिब्बोक बिमोहित मित्त ॥

लीला हाव लच्छन दोहा ।

स्वांग केलि को करत हैं जहां हास्य रसभाव ।
दंपति सुख क्रीड़ा निरखि कहिये लीला हाव ॥

यथा कबित्त ।

चाँदनी में चैत की सकल ब्रजबारी बारी दास मिलि रासरस खेलन भुलानी है । राधे मोर मुकुट लकुट बनमाल धरि हरि ह्वै करत तहां भकह कहानी है ॥ त्योंही तियरूप हरि भाइ तहँ धाइ धरि कहिकै रिसौहैं चलो बो-

ल्यो नँदरानो है। सिगरो भगानी पहिचानी प्यारी मुसकानी छूटिगो सकुच सुख लूटि सरसानी है ॥ २४९ ॥

विलिहाव सवैया।

नाते की गारी सिखाय कै सारी को पींजरो ले पिय के कर दीनै। मैना पढ़ो सुनतै वहि दास जू बार हजार उहै रट लीनै ॥ बूझति आली हँसौंहैं कहा कहैं होत खिसौंहैं लला रस भीनै। आपु अनंद भरी हँसिबो करैं चञ्चल चारु दृगञ्चल कीनै ॥ २५० ॥

ललितहाव लक्षण—दोहा।

ललितहावबरन्योनिरखि तियकोसहज सिंगारु।
अभरन पट सुकुमारता गति सुगन्धता चारु ॥

यथा कवित्त।

पङ्कज से पावन मैं गूजरी जराउन की घाँघरे को घेर दीठि घेर घेर रखियाँ। दास मन मोहिनी मनिन के बनाव बने कण्ठमाल कञ्चुकी हवेलहार पखियाँ ॥ अंगन की जोति जाल फै-

लावत रङ्ग लाल आवत मतङ्ग चाल लीने सङ्ग संखियाँ। भागभरी भामिनी सोहाग भरी सारी सुही माँग भरी मोती अनुराग भरी अँखियाँ॥

सुकुमारता यथा—सवैया।

घाँघरो झीन सो सारी महीन सी पीन नितम्बनि भार उठ्यो खचि। हास सुवास सिँगार सिँगारति बोझनि ऊपर बोझ उठै मचि॥ खेद चलै मुखचन्दनि चै डग द्वैक धरे महि फूलनि सो सचि। जात है पङ्कज बारि बयारि सो वा सुकुमारि को लङ्क लला लचि॥ २५३॥

विलासहाव लक्षण—दोहा।

बोलनि हँसनि बिलोकिबो और भृकुटि को भाव। क्योंहूं चकित सुभाव जहँ सो बिलास है हाव॥

यथा कवित्त।

आदरस आगे धरि आँगन में बैठी बाल इन्दु से बदन को बनाव दरसति है। भौंहन मरोरि मोरि अधर सकोरि नाक अलक सुधारति कपोल परसति है॥ सखी व्यंग्य बोलि को

उठावति बिहँसि कञ्चु चोलीतर सुखमा अमोली सरसति है । खुलित पयोधर प्रकास अस दास नन्दनन्द जू के नैननि अनंद बरसति है ॥२५५॥

किलकिञ्चितहाव – दोहा ।

हरष बिषाद अमादि जो हिये होत बहु भाव ।
भाव सबल शृङ्गार को सो किलकिञ्चितहाव ॥

यथा कवित्त ।

कान्हर कटाच्छन को जाय झरि लाई बाल बैठीही जहाँई ब्रषभान महरानी है । दास दृग साधन की पूतरी लों आरि दृग पूतरी घुमरि वाही ओर ठहरानी है॥केती अनाकानी के जआनी अँगिरानी पै न अन्तर की पीर वह रूप बहरानी है । थकी थहरानी छबि छकी छहरानी धकधकी धहरानी जिमि लकी लहरानी है ॥

चकितहाव यथा – सवैया ।

आज को कौतुक देखिबे को ही कहा कहिये सजनी तू कहा रही । कैसी महाछबि छाये अनेक छबीली छकाय हिते अहिते रही ॥ ओट

तें चोट बिरी करी पीय के बार सुधारत बैठी जितै रही। चञ्चल चारु दृगञ्चल कै तब चन्द-मुखी चहुँ ओर चितै रही ॥ २५८ ॥

बिहितहाव लक्षण दोहा।

हिलिमिलिसकै न लाजबसजियैंभरीअभिलाख।
ललचावै मन दै मनहिं बिहितहाव ज्यों दाख॥

यथा कवित्त।

प्यारे केलिमन्दिर तें करत इसारे उत जा-इबे को प्यारीहू के मन अभिलाख्यो है। दास गुरुजन पास बासर प्रकास ते न धीरज न जात क्योंहू लाज डर नाख्यो है॥ नैन ललचौंहैं पै न क्योंहूं निरखत बनै ओठ फरकौहैं पै न जात कछु भाख्यो है। काजन के ब्याजवाही देहरी के सा-मुहें ह्वै सामुहें के भौन आवागौन करि राख्यो है ॥ २६० ॥

बिक्छित्तिहाव लक्षण—दोहा।

बंन भूखन कै थोहरी भूखन छबि सरसाय ।
कहत हाव बिक्छित्ति हैं जो प्रबीन कबिराय॥

यथा कवित्त।

काहे को कपोलनि कलिन कै देखावती है कलिका सु पञ्चन की अमल छ्यौटि है। आभरन जाल सब अंगन सँवारि कै अनंग की अनीसी कत राखति अगोटि है॥ दास भनि काहे को अन्यास दरसावती भयावन भुअंगिनि सी बेनी लौटि लौटि है। हम ऐसो आसिक अनेकन के मारिवे को कौल नैनी केवल कटाच्छ तेरी कोटि है॥ २६२॥

फेरि फेरि हेरि हेरि करि करि अभिलाख लाख लाख उपमा बिचारत है कहने। बिधिहि मनावै जो घनेरे द्दग पावै तौ चहत याही संतत निहारतही रहने॥ निमिखि निमिखि दास रीझत निहाल होत लूटे लेत मानो लाखु कोटिन के लहने। एरी बाल तेरे भाल चंदन के लेप आगे लोपिजात और के हजारन के गहने॥

मोट्टाइतहाव लक्षण—दोहा।

अनचाही बाहिर प्रगट मन मिलाप की घात।
मोट्टाइत तासों कहैं प्रेम उदीपति बात॥२६४॥

यथा सवैया।

पिय प्रात क्रिया करैं आँगन मैं तिय बैठी सुजेठिन के थल मैं। सुख की सुधि तें उमहै अँसुवा बहरावै जँभाइन के छल मैं॥ न अघानी जऊ सिगरी निसि दास जू कामकलानि कियौ कल मैं। अंखियां झखियां ललकैं फिरि बूड़िबे को हरि की छबि के जल मैं॥ २६५॥

मोहि न देखो अकेलियै दास जू घाटहू बाटहू लोग भरे सो। बोलि उठौ नीखरे ते लै नाम तौ लागि है आपनी दाउ अनैसो॥ कान्ह कुबानि सँभारे रहो निज वैसी नहीं तुम चाहत जैसो। ऐबो इतै करो लैन दही कौ चलैबो कहीं को कहीं कर कैसो॥ २६६॥

कुट्टमित लच्छण—दोहा।

कैलि कलह को कहत हैं हाव कुट्टमित मित्त।
कछु दुखलै सुखसो सन्यौ जहँ नायक को चित्त॥

यथा सवैया।

"रूखी ह्वै जैबो पियूख बगारिबो बंक बिलो-

किबो आदरिबो है। सौंहैं दिवायबो गारी सुनायबो प्रेम प्रसंसनि उच्चरिबो है॥ लातन मारिबो भारिबो बांह निसंक ह्वै अंकनि को भरिबो है। दास नवेली को केलि समै में नहीं नहीं कीबो हहा करिबो है॥ २६८॥

बिब्बोकहाव लक्षण—दोहा।

जहँ पीतम सों करत है कपट अनादर बाल।
कछु इरिषा कछु मद लिये सो बिब्बोक रसाल॥

यथा सवैया।

मान कै बैठी सखीन के सम्मत बूझिबे को पिय प्रेम प्रभाइन। दास दसा सुनि द्वार तें प्रीतम आतुर आयो भयो दुचिताइन॥ बूझि रह्यो पै न हेत लह्यो कहूं अन्त कहा कै गह्यो तिय पाइन। आली लखै बिन कोड़ी को कौतुक ठोढ़ी गहे बिहँसै ठकुराइन॥ २७०॥

देखती ही इहि ढीठे अहीर को कैसे धौं भीतरी आवन पायो। दास अधीन ह्वै कीनो सलाम न दूरि तें दीन ह्वै हेत जनायो॥ बैठि-

गो मेरे प्रजङ्कहो ऊपर जाने को याको कहाँ मन भायो। माइन को चरवाही बिहाय कै बे-परवाही जनावत आयो॥ २७१॥

विभ्रमहाव लक्षण—दोहा।

कहियत विभ्रमहाव जहँ भूलि काज ह्वै जाइ।
कौतूहल बिच्छेय बिधि याही में ठहराइ॥२७२॥

यथा कवित्त।

उलटी यों सारी किनारीवारी पहिचानो यहै कै प्रकास या जुन्हाई बिमलाइ में। दास उलटी पै बेंदी उलटी ये आँगी उलटोई अत-रौटा पहिरे हो उतलाइ में॥ भेदन बिचाख्यो गुञ्ज माले औ गुलीक माले नीलो एकपटो अरु मिलो एकलाइ में। लली कित गली कित जाती हौ निडर चलो कसे कटि कङ्कन औ किङ्किनि कलाइ में॥ २७३॥

कौतूहलहाव यथा—सवैया।

जास सु कौतुक सौध लै सौध पै धाय चढ़ी वृषभानकिसोरी। दास न दूरि तें दीठि थिरै

सु दरी दरी भाँकतिही फिरै दौरी॥ लोग लग्यो इहि कौतुक कौतुक कौतुकवारे को जातही भोरी । चन्द उदौत इतौत चितौत सखी सब की चखचारु चकोरी ॥ २७४ ॥

विच्छेयहाव यथा ।

आज तौ राधे जू कैसी थकी सी तकै चहुं-ओर बिहाइ निमेखै । अंगनि तोरै खरो अँगिराय जँभाइ भुकै पै न नींद बिसेखै ॥ केती भरे बिन काज की भाँवरी बावरी सी कहिये इहि लेखै । दास कोऊ कहै कैसी दसा है तौ सूखी सुनावतो साँवरे देखै ॥ २७५ ॥

मुग्धहाव लच्चण—दोहा ।

जानि बूझि कै बौरई जहाँ धरति है बाम ।
मुग्धहाव तासों कहैं विभ्रमही को धाम ॥२७६॥

यथा सवैया ।

लाहु कहा कहो बेंदी दिये औ कहा है तरौना के बेह गड़ाये । कङ्कन पीठि हिये ससि रेख की बात बनै बलि मोहि बताये ॥ दास

कहा गुन पीठ में अञ्जन भाल में जावक लीक लगाये। कान्ह सुभावही पूछति हौं मैं कहा फल नैननि पान खवाये ॥ २७७ ॥

हेलाहाव लक्षण—दोहा ।

हावन में जहँ होत है निपटै प्रेम प्रकास ।
तासों हेला कहत हैं सकल सुकविजन दास ॥
एक हाव में मिलत जहँ हाव अनेकनि फेरि ।
समुझि लेहिंगे सुमति यह लीला हावै हेरि ॥

यथा कवित्त ।

पिय को पहिराव प्यारी पहिरे सुभाव पिय भाव ह्वै गई है सुधि आपनी न भावती । दास हरि आइ त्योंही सामुहैं निहारे खरे राति मन-भावती को देखि मनभावती ॥ आपनोइ याले मुकुर लै उनमानि कै गोपालै आपनीयै प्रति-बिम्ब ठहरावती । ल्याउ ल्याउ ज्याउ ज्याउ रूप रस प्याउ प्याउ राधे राधे कान्हही लौं ललितै सुनावती ॥ २८० ॥

इति संयोग शृङ्गार ।

अथ वियोग शृङ्गार—दोहा।

बिन मिलाप सन्ताप अति सो वियोग शृङ्गार।
तवन हावहू तेहि कहैं पण्डित बुद्धि उदार॥
ताके चारि बिभाव हैं इक पूरबानुराग।
बिरह कहत मानहिं मिलत पुनि प्रबास बड़ भाग॥
अनुरागी बिरही बहुरि मानी प्रोषित मानि।
चहूं बियोग बिथानि तें चारो नायक जानि॥

पूर्वानुराग।

सो पूरबानुराग जहँ बढ़े मिले बिन प्रीति।
आलम्बन ताको गनै सज्जन दरसन रीति॥२८४॥
दृष्टि श्रुतौ द्वै भाँति के दरसन जानो मित्र।
दृष्टि दरस परतक्ष सपन छाया माया चित्र॥

प्रत्यक्ष यथा कवित्त।

आली दौरि दरस दरस लेहि लेरी इन्दु-बदनी अटा मैं नँदनन्द भूमि थल मै। देखा-देखी होतही सकुच छूटी दुहुन कौं दोऊ दुहूं हाथनि बिकाने एक पल मैं॥ दुहूं हिय दास खरी खरी मैन सर गाँसी परी दिढ़ प्रेम फाँसो

दुहुंन के गल मैं। राधे नैन प्रेरत गोविन्द तन पानिप मैं पैरत गोविन्द नैन राधे रूप जल मैं॥

स्वप्न यथा—सवैया।

मोहन आयो यहां सपने मुसुकात औ खात बिनोद सो बीरो। बैठी हुती परजङ्क में हौंहू उठी मिलबे कहँ कै मन धीरो॥ ऐसे में दास बिसासिन दासी जगायो डोलाय किवार जञ्जीरो। झूठो भयो मिलिबो ब्रजनाथ को एरी गयो गिरि हाथ को हीरो॥ २८७॥

छाया यथा।

आज सवारहीं नन्दकुमार हुते उत न्हात कलिन्दजा माही। ऊपर आइ तू ठाढ़ी उतै कछु जाय परी जल में परछाँही॥ तातें ह्वै मोहित श्रीमनमोहन दास दसा बरनी मोहि पाँही। जानति हौं बिन तोहि मिले ब्रजजीवन को अब जीवन नाही॥ २८८॥

मायादर्शन यथा।

कालि जु तेरी अटा की दरी मैं खरी हुती

एक प्रदीप सिखारी। मैं कह्यो मोहन राधे वहै हरि हेरि रहे पगि प्रेमन भारी॥ तातें तौ दास जू बारही बार सराहत तोहि निसा गई सारी। या छबि चाहि कहाधौं करैंगे महा सुख पुञ्जनि कुञ्जबिहारी॥ २८९॥

चित्रदर्शन यथा।

कौनि सी औनि को है अवतंस कियो कहि बंस कृतारथ काको। नाम है पावन जन्म भये किन पातिन के अधरा अधरा को॥ दास दै बेगि बताय अली अब मौन न प्रान निदान है वाको। सो है कहा वह रूप उजागर मो है हियो यह कागदजा को॥ २९०॥

श्रुतिदर्शन—दोहा।

गुनन सुने पत्री मिले जब तब सुमिरन ध्यान।
दृष्टिदरस बिन होत है श्रुति दरसन यों जानि॥

यथा कवित्त।

जब जब रावरो बखान करै कोऊ तब तब छबि ध्यान कै लखोई उनमान ते। जाने पति-या न पतियान को प्रबोनताई बीन-सुर लीन

ह्वै सुरन उर आनती ॥ चन्द अरविन्दनि मलि-न्दनि सो दास मुख नैन कचकान्ति से सुनेही नेह ठानती । तन मन प्रानन बसीये सो रहति ही कहति ही कि कान्ह मोहिं कैसे पहिचानती ॥

विरह लक्षण –दोहा ।

मिलन होत कबहूं छिनक बिछुरन होत सदाहि।
तिहि अन्तर के दुखन को विरह गुनो मन माहि ॥

यथा कवित्त ।

जब तें मिलाप करि केलिन कलाप करि आनँद अलाप करि आये रसलीन जू । तब तें तो दूनो मन होत छिन छिन छीन पूनो की कला ज्यों दिन दिन होति दीन जू ॥ दास जू सतावन अतनु अति लाग्यो अब ज्यावन-जतन वाकी तुमही अधीन जू । ऐसोई जो हिरदै को निरदै बिनारो ही तो काहे को सिधारे उत प्यारे परवीन जू ॥ २९४ ॥

मानवियोग लक्षण—दोहा ।

जहँ इरषा अपराध तें पिय तिय ठानै मान ।
बढ़ वियोग दसहूं दसह मानबिरह सो जान ॥

यथा कवित्त ।

नींद भूख प्यास उन्हें व्यापत न तापसी लौं ताप सी चढ़त तन चन्दन लगावे तें । अतिही अचेत होत चैतहू की चाँदनी में चन्द्रकन खाये तें गुलाब-जल न्हाये तें ॥ दास भो जगतप्रान प्रान को बधिक औ कृसान तें अधिक भये सुमन बिछाये तें । नेह के लगाये उन तो तैं कछु पाये तेरो पाइबो न जान्यो अब भौंहनि चढ़ाये तें ॥ २६६ ॥

प्रवासवियोग – दोहा ।

पिय बिदेस प्यारी सदन दुसह दुःख प्रवास ।
पत्री संदेसनि सखी दुहूदिसि करै प्रकास॥२६७॥

प्रोषितनायक यथा – कवित्त ।

चन्द चढ़ि देखौं चारु आनन प्रबीन गति लीन होत मात गजराजनि को ठिलि ठिलि । बारिधर धारनि तें बारन यै ह्वै रहै पयोधरनि कू ह्वै रहै पहारनि को पिलि पिलि ॥ दई निरदई दास दीनो है बिदेस तऊ करौं ना अँदेसो तुव

ध्यानही सो हिलि हिलि । एक दुख तेरो है दुखारी नत प्रानप्यारी मेरो मन तोसों नित आवत है मिलि मिलि ॥ २९८ ॥

लहलह लता डहडह तरु डारैं गहगह भयो गजन कै आयो कौन वरि है । चहचह चिरी-धुनि कहकह केकिन की घहघह घनसोर सुनि ते अखरि है ॥ दास यह यहहीं पवन डोलि महँ महँ रहरह यहई सुनावत दवरि है । सहमह समर की वहवह बौज भई तहँ तहँ तिय प्रान लीबे की खबरि है ॥ २९९ ॥

दसौ भेद—दोहा ।

दरमन सकल पुकार पुनि इन तिहुन में मानि।
षहूं भेद मं दास पुनि दसौ दसा पहिचानि ॥
लालस चिन्ता गुनकथन स्मृति उद्वेग प्रलाप ।
उन्मादहि व्याधिहि गनो जड़ता मरन सँताप ॥

लालसा दसा ।

नैन बैन मन मिलि रहै चाह्यो मिलन सरीर ।
कथन प्रेम लालसदसा उर अभिलाख गँभीर ॥

यथा सवैया ।

बारहो मास निरास रहैं ज्यों चहै वहै चातक स्वाति के बुन्दहि । दास ज्यों कञ्ज के भानु को काम बिचारैं न घाम के तेज के तुङ्गहि ॥ ज्यों जलही में जियैं झषियां लखि आजउ सङ्गति के दुख द्वन्दहि । त्यों तरसाय मरैं सखियां अँखियां चहैं मोहनलाल मुकुन्दहि ॥ ३०३ ॥

चिन्तादसा लक्षण दोहा ।

मनसूबनि तं मिलन को जहँ सङ्कल्प बिकल्प ।
ताहि कहैं चिन्तादसा जिनकी बुद्धि अनल्प ॥

यथा सवैया ।

ये बिधि जो बिरहागि के बान सों मारत ही तो हुहै मर मांगी । जौ पसु होंउ तऊ मरि कै सहूं पावरी ह्वै हरि के पग लागौं ॥ दास पखेरुन में करौ मोर जु नन्दकिशोर प्रभा अनुरागौं । भूषन कीजिये तौ बनमालहि जातें गोपालहि के हिय लागौं ॥ ३०५ ॥

कवित्त ।

काहू को न देती दुन बातन को अन्त लै

हुकंत कन्त मानि कै अनन्त सुख ठानती। ज्यों को त्यों बनाइ फेरि हेरि इत उत हिय राहि में दुराइ गृह काजनि बितानती॥ दास जू सकल भाँति होती सुचिताई फेरि ऐसी दुचिताई मन भूलिहूं न आनती। चित्र के अनूप ब्रजभूप के सरूप को जौ क्योंहूं आपरूप ब्रजभूप करि मानती॥ ३०६॥

विकल्पचिन्ता यथा – सवैया।

कोठनि कोठनि बीच फिर्‌यो वह भेष बनाय भुलावनवारो। ऊपरी बात सुनाइ कै आपनी लै गयो भीतरी भेद हमारो॥ दास लियो मनयौंटि अँगोटि उपाइ मनोज महोप जुझारो। टूटै न क्यों सखी लाज गढ़ी पहिलिहीं गयो सुधि लै हरि कारो॥ ३०७॥

गुन कथन – दोहा।

दासदसा गुनकथन में सुमिरि सुमिरि तिय पीय।
अँग अंगनि बरनै सहित रमरङ्गनि रमनीय॥

यथा सवैया।

चन्द सो आनन की चटकीलता कुन्दन सी

तन की छबि न्यारी। मञ्जु मनोहर बार को बानक जागि किये अँखिया रतनारी॥ होत बिदा गहि कण्ठ लगावन बाहु बिसाल प्रभा अधिकारी। बे सुधि श्रीमनमोहन की मन आनतही करैं बेसुधि भारी॥ ३०९॥

स्मृतिदसा—दोहा।

जहँ इकाग्रचित करि धरै मनभावन को ध्यान।
सुस्मृतिदस तेहि कहत हैं लखिलखि बुद्धिनिधान॥

यथा सवैया।

स्याम सुभाय मैं नेह निकाय मैं आपहू ह्वै गये राधिका जैसो। राधि करै अब राधे जु माधौ मैं प्रेम प्रतीति भई तन तैसो॥ ध्यानही ध्यान तें ऐसो भयो अब कोऊ कुतर्क करै यह कैसो। जानत हौं इन्हैं दास मिल्यौ कहूं मंत्र महा पर पिण्ड प्रवेसो॥ ३११॥

राधिका आधिक नैननि मूंदि हियेही हिये हरि की छबि हेरति। मोरपखा मुरली बनमाल पितम्बर पावरी मैं मन फेरति॥ गाइ बजाइ

हियेही हिये लखि साँझ समै घरघाइ को घेरति । दास दसा निज भूले प्रकास हरेही हरेही हरो हरी टेरति ॥ ३१२ ॥

उद्वेगदसा--दोहा ।

जहाँ दुःखरूपी लगै सुखद जु वस्तु अनेग ।
रहिबो कहुँ न सोहात सो दसहदसा उद्वेग ॥

यथा कवित्त ।

एरी बिन प्रीतम प्रकृति मेरी औरै भई तातें अनुमानौं अब जीवन अलप है । काल की कुमारी सो सहेली हितकारी लगै गीतरस बारी मानो गारी की जलप है ॥ बिष से बसन जारैं आग से असन लागैं जोन्ह को जसन काल मानहु कलप है । दसौदिसि दावा सौ पजावा सी पवरि भई आवा सी अजिरि औनि तावा सी तलप है ॥ ३१४ ॥

पुनः सवैया ।

याहि खराद्यो खराद चढ़ाय बिरंचि बिचारि कछू मलिनाई । चूर वहै बगर्यो चहुँ ओर

तरैयन की जू लसै छबिछाई॥ दास नये जुगनू मग फैले बढ़ै रज सी दूतहूँ भरि आई। चोखन है किये घाम अनोखा ससी न अली यह है सबिताई॥ ३१५॥

प्रलापदसा दोहा।

सखिजन सो के जड़नि सो तनमन भयो सँताप।
मोह वैन बकिबो करै ताको कहत प्रलाप॥३१६॥

यथा सवैया।

तिहारे वियोग से द्योस बिभावरी बावरी सी भई डावरी डोलै। रसाल के बौरनि भौंरनि बूझती दास कहा तज्यो नागर नौलै॥ खरी खरी हार हरी हरी डार चितै बररातो बरी बरी हौलै। अरी अरो बीर नरी नरी धीर भरी भरी पीर धरी धरी बोलै॥ ३१७॥

चन्दन पङ्क लगाय कै अङ्ग जगावति आगि सखी बरजोरै। तापर दास सुवासन ढारि कै देति है बारि बयारि झकोरै॥ पापी पपीहा न जीहा थकै तुव पी पी पुकार करै उठि भोरै।

देत कहे हा दई पर दाह गई करि जाहु दई के निहोरे ॥ ३१८ ॥

जाति में होति सुजाति कुजाति न कानन फोरि करो अधसाँसी । केवल कान्ह की आस जियौं जग दास करो किन कोटिन हाँसी ॥ नारि कुलीन कुलीननि से रमैं मैं उनमै चह्यो एकन आँसी । गोकुलनाथ के हाथ बिकानी हौं वे कुलहीन तौ हौं कुलनासी ॥३१९॥

उन्माददसा—दोहा ।

सो उनमाद दसा दुसह धरै बौरई साज ।
रोइ रोज बिनवत उठै करै मोह मैं काज॥३२०॥

यथा सवैया ।

क्यों चलि फिरि बचायो न क्यौंहू कहा बलि बैठे बिचारो बिचारनि । धीर न कोऊ धरै बलबीर चह्यो ब्रजबीर पहार पगारनि ॥ दास जू राख्यो बड़े बरखा जिहि छांह में गोकुल गाइ गुआरनि । कैल जू सैल सो बूड़्यो चहै अब भावती के अँसुआन के धारनि ॥ ३२१ ॥

पुन: कवित्त।

तो बिन बिहारी मैं निहारी गति औरई मैं बौरई के वृन्दनि अमेटत फिरत है। दाड़िम के फूलन मैं दास दाखो दोनों भरि चूमि मधु रसनि लपेटत फिरत है॥ खंजनि चकोरनि परेवा पिक मोरनि मराल सुक भौंरनि समेटत फिरत है। कासमीर हारनि को सोनजुही भारनि को चंपक की डारनि को भेटत फिरत है॥ ३२२॥

व्याधि दसा दोहा।

ताप दुबरई स्वास अति व्याधि दसा मैं लेखि।
आहिआहि बकिबो करै आहिआहि सब देखि॥

यथा कवित्त।

एरे निरदई दई दरस तो देरे वह ऐसी भई तेरे या बिरह ज्वाल जागि कै। दास आस पास पुर नगर के बासी उत माहहू को जानति निदाहै रह्यो लागि कै॥ लै लै सीर जतन भिगाए तन ईठि कोउ नीठि ढिग जावै तऊ आवै

फिरि भागि कै । टीमी में गुलाब जल मीमी में मगहि. सूखै सीसी यों पखिलि परै अंचल सो दागि कै ॥ ३२४ ॥

क्षमता यथा सवैया ।

कोऊ कहै कर हाटक तंत में कोऊ परागन मैं उनमानी । ढूंढ़हु री मकरन्द के बुन्द मैं दास कहै जलजा गुन ज्ञानी ॥ क्षामता पाय रमी ह्वै गई परजंक कहा करै राधिका रानी । कौल मैं दाम निवास किये हैं तलाम किये हूं न पावत प्रानी ॥ ३२५ ॥

जड़ता दसा दोहा ।

जड़ता मं सब आचरन भूलि जात अन्यास ।
तम निद्रा बोलनि हँसनि भूख प्याम रसत्रास ॥

यथा सवैया ।

बात कहै न सुनै कछु काहू सो वा दिन तें भई वैमियै सूरति । साठो घरी परजंक परी सु निमेख भगी अँखियानि सो घूरति ॥ भूख न प्यास न काहू कीत्रास न पास प्रतीन सो दास

कछू रति । कीने मुहूरत लीने कहो तुम कौन की है यह सोने की मूरति ॥ ३२७ ॥

मरन दसा दोहा ।

मरनदसा सब भांति सो ह्वै निरास मरिजाय ।
जीवन मृत कै बरनिये तहँ रसभंग बराय ॥

यथा सवैया ।

नारी न हाथ रही उहि नारी के भारनी मोहि मनोज महा की । जीवन ढंग कहा तें रह्यो परजंक में आधे रही मिलि जाकी ॥ बात को बोलिबो गात को डोलिबो हेरै को दास उसास वृथा की । सीरी ह्वै आई तताई सिधाई कहो मरिबे में कहा रह्यो बाकी ॥ ३२८ ॥

इति श्री भिखारीदासकायस्थकृते
श्रीशृङ्गारनिर्णयः समाप्तः ।

॥ शुभंभूयात् ॥

National Library,
Calcutta-27.

DBA0000101127HIN